समाजवाद को फलने में समय लगता है : इक्कीसवाँ न्यूज़लेटर (2026)

पेट्रोटोपिया के भक्त 01, ओलालेकन जेयिफस (नाइजीरिया), 2021.

प्यारे दोस्तो,

ट्राईकॉन्टिनेंटल : सामाजिक शोध संस्थान की ओर से अभिवादन।

सोवियत संघ के गठन के कुछ ही बरस बाद 1921 में, वी.आई. लेनिन ने एक लेख लिखा। इसका शीर्षक था 'नया ज़माना और नए भेस में पुरानी ग़लतियाँ'। इस लेख में जो विचार लेनिन ने पेश किए, वे इसके तीन साल बाद उनकी मौत तक उनके साथ रहे। उन्हें इस सवाल ने परेशान कर रखा था कि एक ऐसे मुल्क में समाजवाद कैसे खड़ा किया जाए जो युद्ध से तबाह हो चुका है; जिसके पास नाममात्र पूँजी है; जो मुख्यत: किसानों का समाज है जहाँ क़रीब 70 फ़ीसदी लोग अनपढ़ हैं, और जहाँ समाजवादी राज्य चलाने लायक कोई सरकारी तंत्र पहले से मौजूद नहीं है। लेख में लेनिन ने **लिखा**:

> लंबे और अभूतपूर्व संघर्ष के बाद, एक छोटे, किसान बहुल और युद्ध से बर्बाद हो चुके मुल्क में मज़दूर वर्ग को — जो काफ़ी हद तक अपने वर्ग-चरित्र से कट चुका है — वक़्त चाहिए जिसमें कि नई ताक़तें विकसित होकर आगे बढ़ें, और पुरानी ऊर्जा को फिर 'हौसला' मिले। ... इसे समझना ज़रूरी है और मज़दूर वर्ग की ⍰⍰ ताक़त के विस्तार में ⍰⍰⍰⍰⍰ को हिसाब में रखना अनिवार्य है।

यह न्यूज़लेटर 'वक़्त' के विचार को समर्पित है। यह वक़्त एक 'बर्बाद हो चुके मुल्क' को पिछड़ेपन से निकालकर समाजवाद तक ले जाने के लिए ज़रूरी है। (हमारे 100वें डॉसियर, ⍰⍰⍰⍰⍰⍰ को दोबारा पढ़ते हुए मैंने इसके बारे में काफ़ी सोचा)। हम इस विचार पर इस नज़रिए से बात करेंगे कि एक ओर पूँजीवादी समाज संकट से घिरा पड़ा है लेकिन दूसरी ओर समाजवादी प्रक्रिया को परिपक्व होने के लिए समय चाहिए⍰ 'परिपक्व होने के समय' की अवधारणा को यहाँ शुरुआती तौर पर पेश किया जा रहा है, पर हमारे संस्थान के आने वाले लेखों में इस पर और गहराई से चर्चा की जाएगी।

लोग, कॉन्स्टैन्टिन यूऑन (सोवियत संघ), 1923.

आधुनिक दुनिया की सारी समाजवादी क्रांतियाँ ग़रीब मुल्कों में हुई हैं, जहाँ किसान अधिक थे और जहाँ की संपदा साम्राज्यों ने व्यवस्थित ढंग से चुराकर अपने देशों में पहुँचाई थी⍰ सोवियत संघ (1917), वियतनाम (1945), चीन (1949), क्यूबा (1959) — इन ग़रीब मुल्कों में नई क्रांतिकारी सरकारों को लगभग शून्य से अपनी राज्य-क्षमता खड़ी करनी पड़ी। और ढाँचागत निर्माण तथा उद्योग के लिए पाई-पाई जुटानी पड़ी। इन्हें राज्य-क्षमता और पूँजी आसानी से

नहीं मिल गए थे बल्कि क्रांतिकारी प्रक्रियाओं से निकले इन देशों को कई प्रयोग करने पड़े। और इन प्रयोगों का ठीक से लेखा-जोखा नहीं रखा गया। फिर भी इन प्रक्रियाओं के बारे में हमारी मौजूदा जानकारी के आधार पर 'परिपक्व होने के समय' की अवधारणा से जुड़े छह मुख्य बिंदु निकलते हैं। हम आपसे गुज़ारिश करते हैं कि अपने तजुर्बे और अध्ययन के आधार पर इस अवधारणा पर अपने विचार हमें लिखकर भेजें

1. भरोसा धीरे-धीरे बनता है और पुरानी आदतें मुश्किल से छूटती हैं।

क्रांतिकारी सरकारों को वे संरचनाएँ विरासत में प्राप्त होती हैं, जो पीढ़ियों से चली आ रही जाति और जनजाति की प्राचीन पदानुक्रमित व्यवस्थाओं द्वारा निर्मित होती हैं, जो कृषि संबंधों को नियंत्रित करती हैं; साथ ही औपनिवेशिक अपमान और शोषण, तथा व्यापक सामाजिक अभाव से भी प्रभावित होती हैं। मिसाल के तौर पर, सोवियत संघ में बोल्शेविकों ने जल्दी ही जान लिया कि ज़ार के दौर की नौकरशाही संस्कृति अक्टूबर 1917 में ग़ायब नहीं हो गई। भ्रष्टाचार, अधिकारियों के सामने नतमस्तक होना, और सामूहिक संस्थाओं पर अविश्वास जैसी आदतें सालों तक बरक़रार रहीं। 1949 की क्रांति के बाद चीन में कम्युनिस्ट पार्टी को बार-बार कन्फ़्यूशियाई भेदभाव, इलाक़ाई सरपरस्ती, और सदियों से असुरक्षा में रहने को मजबूर किसानों द्वारा अपनाई गई आदतों का सामना करना पड़ा। 1959 के बाद क्यूबा में क्रांतिकारी सरकार ने **'नया इंसान'** बनाने की कोशिशें की क्योंकि वे समझते थे कि समाजवादी चेतना रातोंरात क़ानून बनाकर नहीं लाई जा सकती।

औपनिवेशिक हिंसा और पूँजीवादी ग़ैर-बराबरी में रहते हुए लोग अपने या पारिवारिक स्तर पर अपनी/अपनों की हिफ़ाज़त करने के तरीक़े सीख लेते हैं। समाजवादी परियोजना के कामयाब होने के लिए सबसे पहले यह ज़रूरी है कि जनता सामूहिक ढाँचों पर भरोसा करना सीखे। यह भरोसा धीरे-धीरे अनुभवों के साथ बढ़ता है। जब वे देखते हैं कि स्कूल सुचारु रूप से चल रहे हैं, अस्पताल में वाक़ई इलाज हो सकता है, उनके सरों पर छत है, और संस्थाएँ सही काम कर रही हैं। क्रांति से तुरंत सत्ता तो हासिल की जा सकती है, लेकिन समाज की सोच-समझ को बदलने में समय लगता है

भविष्य, डगलस पेरेज़ (क्यूबा), 2008.

2. व्यापार और वित्तीय नेटवर्क मौजूदा वैश्विक व्यवस्था के पक्ष में हैं।

पूँजीवाद सिर्फ़ विचारधारा के बल पर राज नहीं करता। यह व्यापार और वित्तीय नेटवर्कों, तथा यातायात व संचार के ढाँचों के ज़रिए अपना वर्चस्व बनाए रखता है। जो मुल्क समाजवादी बदलाव की कोशिश करते हैं, उन्हें भी एक ऐसी दुनिया में काम करना पड़ता है जो पूँजीवादी लूट के इर्द-गिर्द बनाई गई होती है। रूसी क्रांति के बाद सोवियत संघ को उन औद्योगिक आपूर्ति शृंखलाओं, बैंकिंग नेटवर्क, और व्यापारिक रास्तों के ज़रिए काम करना पड़ा जो द्वेषपूर्ण पूँजीवादी ताक़तों के क़ब्ज़े में थे। 1991 में सोवियत संघ के विघटन के बाद क्यूबा के तजुर्बे ने यह बात और साफ़ कर दी। क्यूबा के लिए ईंधन, कल -पुर्ज़े, ऋण और व्यापारिक रिश्तों तक पहुँच रातों-रात ख़त्म हो गई। क्योंकि दुनिया की अर्थव्यवस्था उन ढाँचों से बनी थी जिनसे क्यूबा को काफ़ी हद तक बाहर रखा गया था। (यूएस के ग़ैर-क़ानूनी तेल प्रतिबंध के साथ क्यूबा को दुनिया से अलग करने की साज़िश अब भी जारी है।) 1975 में एकीकरण के बाद वियतनाम के सामने युद्ध से तबाह अर्थव्यवस्था थी और देश प्रमुख वित्तीय और व्यापारिक नेटवर्कों से बाहर था। मौजूदा ढाँचे बरकरार रह पाते हैं क्योंकि बंदरगाहों से लेकर मुद्रा और सॉफ़्टवेयर मानक आदि सभी संस्थाएँ उन्हीं के पक्ष में काम करती है। और वैकल्पिक संस्थाएँ बनाने में सालों नहीं, दशकों लग जाते हैं।

3. उपनिवेशवाद से ग़रीब किए गए देशों में पूँजी और बुनियादी ढाँचे बनाने में भारी

लागत आती है।

वियतनामी क्रांतिकारियों ने यूएस साम्राज्यवाद को हराया, लेकिन उनका मुल्क बमबारी से तबाह हो चुका था और जहाँ मिट्टी एजेंट ऑरेंज (फ़सलों और जंगलों को बर्बाद करने के लिए यूएस द्वारा भारी मात्रा में छिड़का गया ज़हरीला कैमिकल) के कारण ज़हरीली हो गई थी। क्यूबा को क्रांति के बाद सिर्फ़ गन्ने की फ़सल पर टिकी अर्थव्यवस्था विरासत में मिली, जो लगभग पूरी तरह यूएस से जुड़ी थी। 1949 का चीन एक सदी के अपमान और छोटे-छोटे सैन्य शासनों, जापानी साम्राज्यवाद, और गृहयुद्ध से निकला था, जहाँ जीवन प्रत्याशा कम थी, ज़्यादातर जनता अनपढ़ थी, और औद्योगिक क्षमता कम थी।

इन मुल्कों को रेलवे, बंदरगाह, स्कूल, वैज्ञानिक संस्थान, बिजली संयंत्र, इस्पात कारख़ाने, और बाक़ी सब कुछ लगभग शून्य से खड़े करने पड़े। उत्तरी अटलांटिक पूँजीवादी मुल्कों ने औद्योगिक विकास सदियों में किया था। इस विकास का ख़र्च ग़ुलामी, औपनिवेशिक लूट, और साम्राज्यवादी कर के सहारे उठाया गया। लेकिन उपनिवेश रहे ग़रीब मुल्कों की समाजवादी सरकारों से उम्मीद की गई कि वे इस पूरी प्रक्रिया को चंद दशकों में हासिल कर लें। जबकि इस बीच वे लगातार प्रतिबंधों या सैन्य ख़तरों का सामना कर रहे थे। इन सब का हिसाब किए बिना उन पर असफलता का इल्ज़ाम लगाया जाता है। बल्कि सच्चाई यह है कि इन ठोस परिस्थितियों ने सामाजिक बदलाव की प्रक्रिया को धीमा किया।

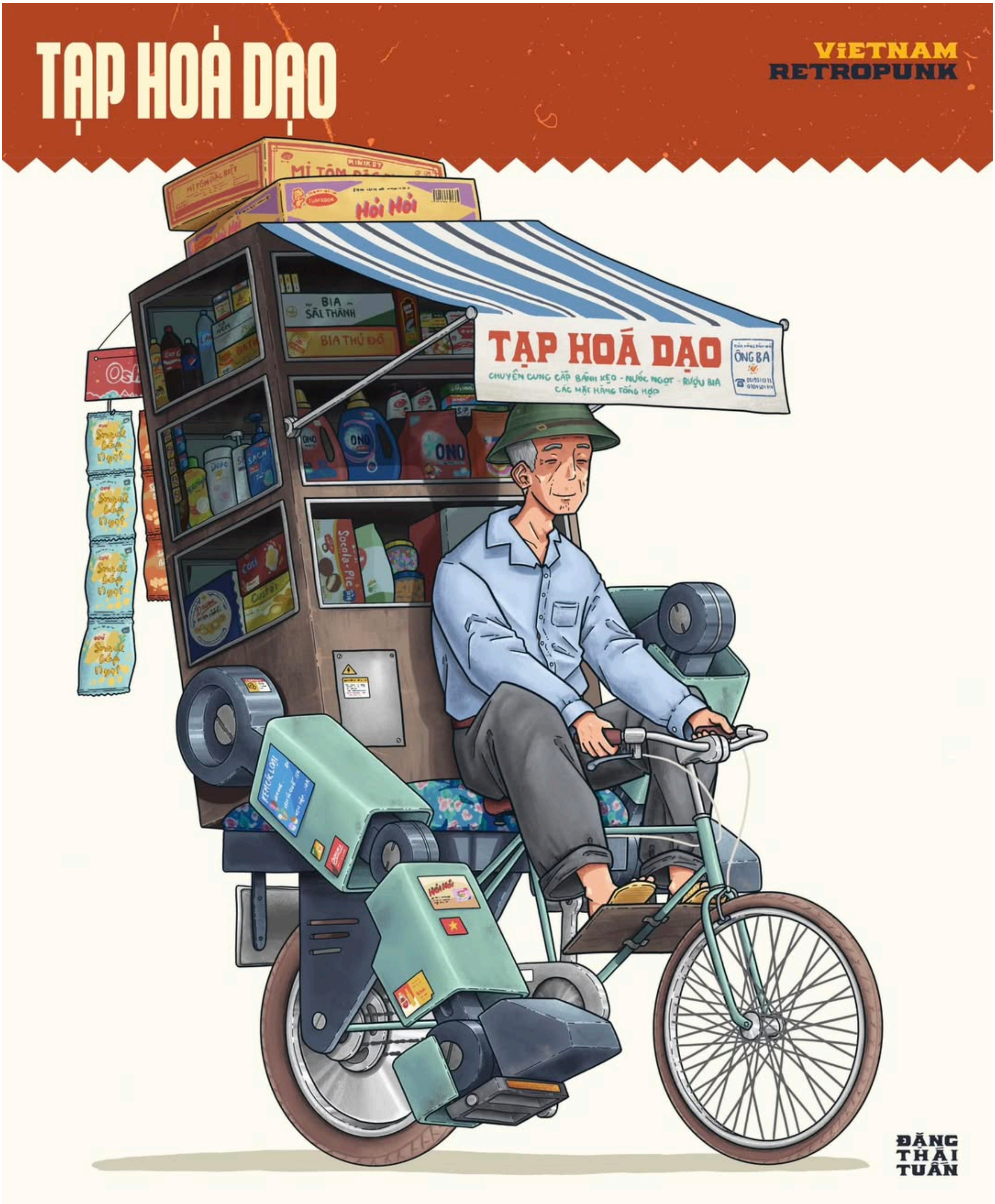

शीर्षकहीन (चलती-फिरती किराने की दुकान), डेंग थाई तुआन (वियतनाम), 2021.

4. प्रतिबंध, आक्रमण, राजनयिक अलगाव और युद्ध जैसे बाहरी दबाव विकास की गति को धीमा करते हैं।

तीसरी दुनिया की हर क्रांतिकारी सरकार को सैन्य घेरेबंदी या आर्थिक आक्रमण झेलने पड़े हैं। 1917 के बाद सोवियत संघ पर बारह से ज़्यादा देशों ने आक्रमण किया। इसके बाद उन्हें नाज़ी हमले का सामना करना पड़ा, जिसमें कम-से-कम दो करोड़ सत्तर लाख सोवियत नागरिक मारे गए और हज़ारों शहर व गाँव तबाह हुए। क्यूबा दशकों से यूएस के प्रतिबंध झेल रहा है। ये प्रतिबंध ज़ाहिर तौर पर सामाजिक अभाव और असंतोष पैदा करने के लिए लागू किए जा रहे हैं। चिली की पॉपुलर यूनिटी सरकार ने ढाँचागत बदलाव की कोशिश की। लेकिन ये सुधार पक्के तौर पर कुछ कर पाते उससे पहले ही देश को आर्थिक अस्थिरता, अभिजात वर्ग के विरोध, और बाहरी दख़ल का सामना करना पड़ा। निकारागुआ की सैंडिनिस्टा सरकार को यूएस–पोषित कॉन्ट्रा जंग झेलनी पड़ी। और तो और उनके सबसे महत्वपूर्ण बंदरगाह, कोरिंटो, समेत देश के कई अन्य बंदरगाहों में बारूदी सुरंगें बिछाई गईं। वियतनाम को 1945 से 1975 तक उपनिवेशवाद-विरोधी युद्ध लड़ना पड़ा था।

इन तमाम आक्रमणों ने वो सारे साधन खपा दिए जो सामाजिक विकास में लगाए जाते। प्रतिबंध लेन-देन की लागत बढ़ाते हैं, प्रौद्यौगिकी तक पहुँच सीमित करते हैं, और लंबे समय के लिए वस्तुओं की किल्लत पैदा करते हैं। युद्ध सभी बुनियादी ढाँचों को तबाह कर देता है और श्रम शक्ति को निर्माण कार्यों की बजाय रक्षा क्षेत्रों की ओर मोड़ देते हैं। इन कठोर हालात में असफलता, विचारधारा या योजना की कमी से नहीं, बल्कि दुश्मन ताक़तों द्वारा थोपी गई स्थाई आपातकाल स्थिति से आती है।

5. हर प्रक्रिया अपने शुरुआती दौर में अक्षम होती है।

क्रांतिकारी सरकारें नए प्रशासनिक ढाँचे बनाने के साथ-साथ और भी बहुत कुछ कर रही होती हैं। जैसे शिक्षा और स्वास्थ्य सेवा का विस्तार, भूमि सुधार और औद्योगिक विकास आदि। ऐसे में ग़लतियाँ, प्रक्रियात्मक अव्यवस्था, अड़चनें या आपूर्ति की कमी होना लाज़मी हैं। सोवियत योजना विभाग को शुरुआती दौर में तालमेल बिठाने में मुश्किल आई। क्योंकि मुनाफ़े की जगह सामाजिक न्याय पर टिकी महाद्वीपीय अर्थव्यवस्था चलाने का कोई ऐतिहासिक उदाहरण उनके पास नहीं था। चीन के कम्यून और औद्योगिक प्रयोगों को तकनीकी निपुणता की कमी और स्थानीय स्तर पर असमान रूप से लागू होने जैसी समस्याओं से जूझना पड़ा। क्यूबा में प्रशिक्षित पेशेवरों की कमी हो गई क्योंकि बहुत-से लोग क्रांति के बाद मियामी (यूएस) भाग गए।

सरकारी तंत्र काम करते-करते सीखता है। लगातार कोशिश और भूल से सीखते हुए ही संस्थाओं का विकास होता है। ग़रीब मुल्कों के समाजवादी प्रशासनों से उम्मीद की जाती है कि वे फ़ौरन कुशल हो जाएँ। जबकि वे प्रतिबंध, निरक्षरता और तकनीकी पिछड़ेपन का सामना कर रहे होते हैं। इसलिए शुरुआती अकुशलता कोई अपवाद नहीं, बल्कि किसी भी बड़े पैमाने के सामाजिक बदलाव की पहचान है।

स्वर्गीय महल की ओर आरोहण III, मिंग वोंग (सिंगापुर), 2015.

6. छोटे चुनावी चक्र सामाजिक बदलाव की राह रोकते हैं।

सामाजिक बदलाव के लिए दशकों की योजना-दृष्टि चाहिए। लेकिन चार-पाँच साल के चुनावी चक्र दीर्घकालिक पुनर्निर्माण की जगह तात्कालिक उपभोग को तरजीह देते हैं। क्रांतिकारी सरकारों को दिखने लायक़ नतीजों से पहले लंबा सब्र करना पड़ता है। समाजवादी राज्यों से बाहर भी जो सरकारें पुनर्वितरण या विकास कार्यक्रम चलाती हैं उन्हें अकसर परियोजनाओं के नतीजे आने से पहले ही चुनावों में नाकामी का सामना करना पड़ता है। परिवर्तनगामी राजनीति निरंतरता माँगती है, लेकिन मीडिया चक्रों और आर्थिक दबावों के आधार पर चलने वाले चुनावी ढाँचे अल्पकालिक प्रबंधन को जिताते हैं। इसलिए समाजवादी प्रयोगों को बार-बार ऐतिहासिक समय (समाज को नए सिरे से गढ़ने के लिए ज़रूरी लंबा समय) और चुनावी समय (आधुनिक राजनीति की लय) के अन्तर्विरोध से जूझना पड़ा है⍰

आंदोलनरत महिलाएँ, एवा शुल्त्से-नाबे (पूर्वी जर्मनी), 1952.

बर्टोल्ट ब्रेख़्त के नाटक *⍰⍰⍰* (1931) में मुख्य पात्र, पेलागिया व्लासोवा, एक के बाद एक परेशानी से जूझती रहती है। लेकिन रूसी क्रांति उसे कर्ता की भूमिका में ले आती है⍰ एक दृश्य में कई औरतों के साथ वह एक रसोई में है। उनमें से एक औरत शिकायत करती है कि उसने सुना है कि कम्युनिज़्म (साम्यवाद) अपराध है। व्लासोवा गाकर इसका जवाब देती है :

> इसे समझो — तुम समझ सकती हो⍰
>
> आसान है।

> अगर तुम शोषक नहीं, तो समझ जाओगी।
>
> यह तुम्हारे भले के लिए है।
>
> ग़ौर करो।
>
> बेवकूफ़ इसे बेवकूफ़ी कहते हैं,
>
> और सड़ी सोच वाले इसे गंदगी कहते हैं।
>
> जबकि यह गंदगी के ख़िलाफ़ है, और बेवकूफ़ी के ख़िलाफ़ भी।
>
> शोषक इसे अपराध कहते हैं।
>
> पर हम जानते हैं कि इससे अपराध ख़त्म होंगे।
>
> यह पागलपन नहीं, पागलपन का अंत है।
>
> यह अराजकता नहीं, व्यवस्था है।
>
> यह सरल सत्य/विचार/सपना है, जिसे साकार करना थोड़ा मुश्किल है।

'परिपक्व होने के समय' के बारे सोचते हुए मुझे व्लासोवा का गीत याद आया। व्लासोवा ने ज़िन्दगी भर काम किया। मगर दिखाने को उसके पास अपनी गरिमा के सिवा कुछ नहीं था। भले ही उसने स्कूली तालीम नहीं पाई थी, पर वह समझदार थी। वह जानती थी कि कम्युनिज़्म (साम्यवाद) 'सरल विचार' है, लेकिन वह सपनों की दुनिया में जीने वालों में से नहीं थी। क्योंकि उसे पता था कि यह सरल है, लेकिन इसे 'साकार करना है मुश्किल'।

स्नेह सहित,

विजय